Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
October to December 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLVIII, ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

गोदान उपन्यास में कृषक-पीड़ा

जगदीश सिंह*

* सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय, खानपुर, झालावाड (राज.) भारत

शोध सारांश – स्वातंत्र्योत्तर पूर्व हिन्दी उपन्यास की विकास यात्रा में प्रेमचन्द का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा है। साहित्य के व्यापक उद्देश्य में लोकमंगल की कामना रहती है और साहित्य की विकास प्रक्रिया में मनुष्य का महत्त्व होता है। जिसके अन्तर्गत समाज के ऊँचे-नीचे सभी वर्ग आ जाते हैं। मनुष्य चाहे किसी भी वर्ग या सम्प्रदाय काहो उसके जीवन जीने की प्रक्रिया एक जैसी होती है। इसी प्रक्रिया से प्रेमचन्द भी प्रभावित थे। प्रेमचन्द गाँधीवादी आदर्श जीवन प्रणाली तथा सत्य-अहिंसा के प्रबल समर्थक होते हुए भारतीय संस्कृति के मूलभूत आधारों-त्याग, संयम, उदारता, आदर्श, सेवा, परोपकार आदि जीवन-दर्शन के प्रेरक तत्त्वों में विश्वास करते थे। इन्हीं प्रेरक तत्त्वों का पूर्ण विकास भारतीय कृषक में मानते हुए प्रेमचन्द ने 1936 ई. में गोदान उपन्यास की रचना की। गोदान उपन्यास प्रेमचन्द की परिपक्वजीवन-दृष्टि का परिणाम है। जो कृषक पीड़ा बनकर उभरी है। ग्रामीण जीवन का ऐसा यथार्थ एवं प्रामाणिक चित्रण गोदान उपन्यास में हुआ कि इसे सर्वत्र सराहना प्राप्त हुई है।

प्रस्तावना – सामाजिक स्तरीकरण और भारतीय कृषक के बीच सम्बन्ध बहुत जटिल है। इसे प्राय: बहुत ही सरल भाषा में व्यक्त किया जा सकता है। भारतीय किसान से ही भारत की अर्थव्यवस्था का ढांचा सुचारू रूप से चलता रहा है और चलता रहेगा। आर्थिक विषमता समाज का एक आवश्यक पक्ष बन गया है। इस पक्ष के आधार पर ग्रामीण समाज मजदूर और जमींदार दो वर्गो में विभाजित हो गया है। किसी भी क्षेत्र की सम्पत्ति उच्चवर्ग के मुट्ठीभर लोगों के हाथो में सिमट कर रह गई है जो इसी सम्पत्ति के बल पर गरीब किसान का शोषण करने से नहीं थकते हैं। आर्थिक विषमता ने समाज को एक ऐसे कटघरे पर खडा कर दिया है कि किसानवर्ग न चाहते हुए भी शोषण का शिकार होता है।

प्रेमचन्द ने गोदान उपन्यास में कृषक वर्ग की आर्थिक विषमता, भुखमरी, जमींदार वर्ग के अत्याचारों का बहुत ही सटीक चित्रण किया है। ग्रामीण जीवन यापन करने वाला किसान पूर्णत: खेती पर निर्भर रहता है लेकिन वर्ष भर कार्य करने के बाद उसको रोटी, कपडा भी उपलब्ध नहीं हो पाता तो उसकी थकान की कराह एक पीड़ा के रूप में बाहर निकलती है। गोदान उपन्यास तो कृषक जीवन की महागाथा है जिसमें किसान के जीवन की विशद् व्याख्या की गई है। किसान के जीवन के प्रत्येक पक्ष को बारीकी से उकेरा गया है। प्रेमचन्द के गोदान उपन्यास का फलक ग्रामीण होते हुए विराट है। इसमें आंचलिकता के साथ चेतनागत बौद्धिकता का समावेश है। जिसके माध्यम से गाँव की गरीबी, गुलामी, पीड़ा, उत्पीडन जनता में व्याप्त भय, सामाजिक विषमताओं तथा गाँव में होने वाले क्रिया-कलापों का जीवन्त एवं विश्वसनीय चित्रण हुआ है। गोदान उपन्यास ग्राम्य जीवन के किसी कल्पित आदर्श को नहीं बल्कि व्यक्ति के भोगे हुए यथार्थ को प्रकट करता है।

गोदान में कृषक पीड़ा – प्रेमचन्द ने साहित्य को जीवन की व्यापक अनुभूति के साथ सम्बद्ध करके देखा था। उन्होंने उसे सुरूचि जागृत करने वाला, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति देने वाला, सौन्दर्यबोध का उन्मेष करने वाला तथा शक्ति और गति उत्पन्न करने वाला माना था। इसलिए उनके उपन्यासों में व्यक्ति चेतना, समाज-मंगल, यथार्थ की अनुभूति, आदर्श की कल्पना आदि विशेषताओं का समावेश हुआ है। इन्हीं विशेषताओं का उद्घाटन करने वाला उनका सबसे अन्तिम उपन्यास गोदान है जिसमें उन्होंने कृषक वर्ग के जीवन के उतार चढ़ाव, मान-मर्यादा, सामाजिकता तथा भावनात्मक सम्बन्धों को प्रकट किया है। गोदान कृषक जीवन की गाथा है जिसमें मुख्य पात्र किसान होरी है जिसके इर्द-गिर्द सारा वातावरण घटित होता है। प्रत्येक घटना का जुड़ाव मूल पात्र होरी से होता है। कृषक के जीवन की प्रत्येक पीड़ा को तथा विपन्नता की विवशता को होरी के माध्यम से प्रकट करते हुए प्रेमचन्द ने होरी के माध्यम से किसान की धैर्यशीलता को प्रकट किया है। जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह बेलारी गाँवके किसानों से लगान वसूल करते हैं। जमींदार का किसी से भी भावनात्मक सम्बन्ध नहीं होता, किसान के द्वारा मेल-जोल रखने पर भी वह लगान में छूट नही देता, होरी भी यह जानता है परन्तु अपनी गरीबी की विवशता के कारण यह सब करना पड़ता है। जमींदार से अधिक मेल-जोल बढ़ाने का होरी की पत्नी धनियां के द्वारा विरोध करने परवह अपनी विवशता को प्रकट करता हुआ कहता है – 'तू जो बात नहीं समझती उसमें टांग क्यों अड़ाती है भाई। मेरी लाठी दे दे और अपना काम देख। यह इसी मिलते-जुलते रहने का परसाद है कि अब तक जान बची हुई है, नहीं कहीं पता न लगता कि किधर गये। गाँव में इतने आदमी तो हैं, किस पर बेदखली नहीं आयी किस पर कुडकी नहीं आयी ? जब दूसरे के पाँवो-तले अपनी गर्दन दबी हुई है, तो उन पाँवों को सहलाने में ही कुशल है।'[1]

धनियां को अपने जीवन में अच्छी तरह अनुभव हो जाता है कि जमींदार की कितनी ही खुशामद की जाये, कितनी ही कतर-ब्योंत की जाये, कितना ही पेट-तन काटा जाये लेकिन लगान बेवाक होना मुश्किल है इसलिए वह होरी को भी आगाह करती रहती है। स्वतंत्रता पूर्व किसान सिर्फ जमीन का मालिक नहीं एक मजदूर था जो पूरी साल खेतों में काम करता और वर्ष के

अन्त में उसको रोटी–कपड़ा भी नहीं मिल पाता। रोटी–कपड़ा के अलावा किसान को और अभावों की पूर्ति की अभिलाषा करना एक शाप से कम नहीं होता था। भारतीय संस्कृति की प्रतीक गाय किसान के घर की शोभा को बढाने के लिए होती है। होरी के दिल में यह इच्छा जाग्रत होती है। होरी सोचता है – 'गऊ से ही तो द्वार की शोभा है। सबेरे–सबेरे गऊ के दर्शन हो जायें तो क्या कहना ! न जाने कब यह साध पूरी होगी, कब वह शुभ दिन आयेगा।'[2] लेकिन होरी की यह इच्छा उसके जीवन के अन्तिम चरण तक भी पूरी नहीं होती है। वह एक–एक पैसा बचाता है। कमर–तोड़ मेहनत करता है। उस गाय की इच्छापूर्ति के लिए अपनी शरीर की भी परवाह नहीं करता है और वह उम्र से पहले ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। प्राण निकलते समय भी उसकी यही इच्छा उभर कर पाठक वर्ग के सामने आती है। जब होरी का पुत्र गोबर होरी के पास आता है तब होरी कहता है – 'तुम आ गये गोबर ? मैने मंगल के लिए गाय ले ली है। वह खड़ी है, देखो।'[3]

होरी के जीवन में इस इच्छा की पूर्ति नहीं हुई और अन्त समय पर भी नहीं हुई। भारतीय परम्परा में मनुष्य के अन्त समय में गो–दान किया जाता है जिससे व्यक्ति के द्वारा किये गये समस्त पाप कट जायें लेकिन होरी की गरीबी की विवशता देखो– 'धनिया यन्त्र की भांति उठी, आज जो सुतली बेची, उसके बीस आने लायी और पति के ठण्डे हाथ में रखकर सामने खडे दातादीन से बोली– 'महाराज घर में गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गो–दान है।'[4]

भारतीय किसान मेहनत करने पर भी कर्ज में डूबा रहता है। इसका जिम्मेदार जमींदार वर्ग होता है। जमींदार वर्ग की मानसिकता इतनी विकृत हो गई है कि किसान का शोषण करते हुए नहीं थकती। इस शोषण का परिणाम भी उसको पता होता है लेकिन अपने भोग–विलास का आदि होने के कारण उस परिणाम की चिन्ता नहीं करता। जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह किसान की आह और पीड़ा के कारण जमींदार वर्ग के पतन का अनुमान करते हुए कहता है– लक्षण कह रहे हैं कि बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है। मैं उस दिन का स्वागत करने के लिए तैयार बैठा हूँ। ईश्वर वह दिन जल्दी लाये। वह हमारे उद्धार का दिन होगा।'[5]

किसान वर्ग भाग्यवादी होता है। वह कर्म तो करता है लेकिन भाग्य पर अधिक विश्वास करता है। भारतीय मान्यता रही है कि मानव को अपने पूर्वजन्म के कर्मो से वर्तमान का भाग्य संचालित होता है। और वर्ग चाहे इसकी परवाह न करे लेकिन किसान की इस मान्यता में पक्की आस्था होती है। सुख–दु:ख, गरीबी–अमीरी, स्वास्थ्य–रोग आदि को भाग्य की देन मानता है। वह किसी भी परिस्थिति में इसका प्रतिवाद नहीं करना चाहता और न ही किसी को प्रतिवाद करने देता है। गोदान का पात्र होरी भी पूर्णत: भाग्यवादी है जो अपने पुत्र गोबर द्वारा भाग्य का प्रतिवाद करने पर उसे रोकते हुए कहता है –'यह बात नहीं है बेटा, छोटे–बडे भगवान के घर से बनकर आते हैं। सम्पत्ति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होंने पूर्व जन्म में जैसे कर्म किये हैं, उनका आनन्द भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा तो भोगें क्या ?'[6]

पूँजीपति वर्ग के ऊपर कुछ भी मर्यादा मान्य नहीं होती है वह सब भी गरीब किसान पर ही लागू होती है। किसान के सभी कार्यो को एक मर्यादाहीन समझा जाता है। प्रथम तो कृषक को जमींदार कर्जे से ही राहत नहीं मिलती उसके बाद समाज के कुछ सम्पन्न लोग भी गरीब हो आकर दबाने लगते है। और वह ऐसा करते है कि गरीब अपनी पीड़ा की आह को बाहर निकलने से रोक नहीं पाता है। होरी का बेटा गोबर झुनिया को अपनी जीवन संगिनी चुनता है तो गाँव के लोगों को बडा आघात लगता है। बिरादरी वाले होरी पर सौ रूपये और तीस मन अनाज का डाँड लगाते है। इस डाँड को सुनकर धनिया बहुत पीड़ित होती है और वह पंचायत में अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए कहती है– 'पंचो, गरीब को सताकर सुख न पाओगे, इतना समझ लेना। हम तो मिट जायेंगे, कौन जाने इस गाँव मे रहें या न रहें लेकिन मेरा सराप तुमको भी जरूर लगेगा। मुझसे इतना कड़ा जरीवाना इसलिए लिया जा रहा है कि मैंने अपनी बहू को क्यों अपने घर में रखा। क्यों उसे घर से निकालकर सड़क की भिखारिन नहीं बना दिया। यही न्याय है– ऐं ?'[7]

भारतीय किसान प्रत्येक अर्थदण्ड सहन करने को तैयार रहता है लेकिन अपनी बिरादरी से बेदखली नहीं चाहता। सब का पालन करना भारतीय किसान के जिम्मे होता है। पूँजीपतियों के लिए कुछ भी मान्य नहीं होता। किसान तिल–तिल मरता है लेकिन समाज को कभी भी विखरने नहीं देता। अपने अन्तर्मन की पीड़ा का दमन करके वह समाज हित का कार्य करता है। बिरादरी द्वारा डाँड़ लगाने पर होरी की मन:स्थिति भी ऐसी होती है – 'बिरादरी का वह आतंक था कि अपने सिर पर लादकर अनाज ढो रहा था, मानो अपने हाथों अपनी कब्र खोद रहा हो। जमींदार, सरकार, साहूकार किसका इतना रोब था ? कल बाल–बच्चे क्या खायेंगे, इसकी चिन्ता प्राणों को सोखे लेती थी, पर बिरादरी का भय पिशाच की भांति सिर पर सवार आँकुस दिये जा रहा था। बिरादरी से पृथक जीवन की वह कल्पना ही न कर सकता था।'[8]

गरीब किसान की गृहस्थी में कोई काम भी अच्छा और समय से नहीं होता। जीवन भर वह अपमान और निराशा के गर्त में धँसता चला जाता है। उसको ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है किवह स्वयं भी जिसको करना अपमान समझता है। होरी की छोटी बेटी रूपा शादी लायक है। होरी के पास पैसा नहीं है। कर्ज में डूबा हुआ है। उसके सामने अपने खेत बेचने के आलावा दूसरा रास्ता नजर नहीं आता। इसी निराशा को भांपकर पण्डित दातादीन होरी को अपनी बेटी को बेचने की सलाह देता है। वह भी उस अधेड़ रामसेवक को जो होरी से दो चार साल ही छोटा होता है। लेकिन होरी की विवशता यह करने को मजबूर होती है। यह सब करते हुए वह स्वयं भी पीड़ित है। होरी अपनी स्थिति का आंकलन करते हुए कहता है – 'ऐसे आदमी से रूपा के ब्याह करने का प्रस्ताव ही अपमान जनक था। कहाँ फूल सी रूपा और कहाँ वह बूढ़ा ठूँठ! जीवन में होरी ने बड़ी–बड़ी चोट सही थी, मगर यह चोट सबसे गहरी थी। आज उसके ऐसे दिन आ गये कि उससे लडकी बेचने की बात कही जाती है और उसमें इनकार करने का साहस नहीं है। ग्लानि से उसका सिर झुक गया।'[9] होरी अपनी पीड़ा को दबाते हुए यह काम भी करता है। किसान के जीवन में जो कार्य त्याज्य होने चाहिए वह भी करने पड़ते हैं। गोदान उपन्यास में शुरू से लेकर अन्त तक प्रेमचन्द ने होरी के माध्यम से कृषक–पीड़ा को बखूवी चित्रित किया है। जिससे सम्पूर्ण कृषक–वर्ग को गुजरना पड़ता है।

निष्कर्ष – प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास गोदान में कृषक मन के द्वन्द्व, पीड़ाओ और विद्रोह के भावों को बडी ही गहनता से उकेरा है। कृषक–जीवन की प्रत्येक समस्या को पाठक के सामने यथार्थ रूप में रखा है। लेकिन समस्याओं का कोई भी समाधान उन्होंने प्रकट नहीं किया है। यह विषय प्रेमचन्द ने पाठक वर्ग को छोड़ा है कि इस भारतीय कृषक जीवन से कितना संतुष्ट होता है और कितना उसका विरोध करने की क्षमता विकसित कर पाता है। गोदान में कृषक के तीव्र विक्षोभ के साथ उसके संघर्षशील जीवन की सच्चाई को अभिव्यक्त किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 5
2. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 6
3. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 319
4. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 320
5. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 14
6. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 17
7. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 111
8. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 112
9. गोदान – प्रेमचन्द, पृ.सं. 308

****